# पिछड़ी जाति में सामाजिक गतिशीलता को प्रेरित करने वाले तत्त्व

**शम्स आमना महबूब***
**प्रोफेसर फज़ल अहमद****

बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में ब्रिटिश प्रशासकों ने शूद्र जातियों के लिए पिछड़े वर्ग शब्द का प्रयोग करना शुरू किया। इसका आधार यह था कि ये वर्ग पाश्चात्य शिक्षा और सरकारी नौकरियों को हासिल करने में नाकाम रहे थे। एम. एन. श्रीनिवास का मानना है कि शूद्र शब्द की इतनी व्यापक सांस्कृतिक और संरचनात्मक परिधि है कि यह एक तरह से अर्थहीन हो जाता है। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 16(4) नागरिकों के किसी पिछड़े वर्ग के लिए सरकारी नौकरियों और शिक्षा में आरक्षण का प्रावधान करता है। इंदिरा साहनी बनाम भारतीय संध (1993) मुकदमें में बहुमत के निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया कि ''हमारे विचार में, अनुच्छेद 16(4) में प्रयुक्त शब्द– 'वर्ग' सामाजिक वर्ग के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है, न कि उस अर्थ में, जैसा कि मार्क्सवादी अवधारणा के अन्तर्गत इसे समझा जाता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार द्वारा पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की संभावनाओं को तलाशने के लिए गठित पिछड़ा वर्ग आयोगों ने 'पिछड़ा वर्ग' शब्द का प्रयोग उन जातियों के लिए किया, जो कर्मकांड और व्यवसाय के स्तर पर अछूतों के ऊपर हों, किन्तु पारंपरिक समाज की जाति व्यवस्था के निम्न स्तर पर हों। इस प्रकार, अन्य पिछड़े वर्गों के अन्तर्गत वे जातियाँ आती है, जो मध्यवर्ती जातियाँ हैं। ये जातियाँ कर्मकांडीय ढाँचे में ब्राह्मणों और क्षत्रियों के नीचे तथा अछूतों से ऊपर हैं। ऊँची जातियों के मुकाबले कर्मकांड में इनकी स्थिति निम्नतर अवश्य थी, लेकिन इनकी तुलना दलितों से नहीं की जा सकती। इसका कारण यह है कि अक्सर इनके पास कुछ जमीन और दूसरे आर्थिक स्त्रोत रहे हैं। इन्हें अस्पृश्यता का सामना भी नहीं करना पड़ता है।

***शोध छात्रा, समाजशास्त्र विभाग पटना विश्वविद्यालय, पटना**
****विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग पटना कॉलेज, पटना विश्वविद्यालय, पटना**



यहाँ जिन पिछड़ी जातियों का उल्लेख किया गया है, वे वही जातियाँ हैं, जो अन्य पिछड़े वर्गों के अन्तर्गत आती हैं। पिछड़ी जातियों के उल्लेख से तात्पर्य हिन्दू पिछड़ी जातियों से है। पिछड़ी जातियों को तीन भागों में बांटा गया है जैसे– ऊँची पिछड़ी जातियाँ, निम्न पिछड़ी जातियाँ तथा अन्य पिछड़ी जातियाँ।

**ऊँची पिछड़ी जातियाँ :–**

ऊँची पिछड़ी जातियाँ शब्द–समूह से तात्पर्य यादव, कुर्मी–कोइरी और बनिया जाति से है। पिछड़ी जातियों में इन जातियों की स्थिति ज्यादा अच्छी है। यादव, कुर्मी–कोइरी जनसंख्यात्मक और आर्थिक दोनों ही रूप में मजबूत है। बनिया जाति आर्थिक रूप से मजबूत है। राजनीति में बनिया जाति की मजबूत उपस्थिति का कारण इसकी सशक्त आर्थिक स्थिति के साथ ही साथ इसका वैश्य जाति/समुदाय से जुड़ा होना भी है। वैश्य जाति/समुदाय में बनिया, तेली, सूरी, कलवार, सोनार आदि प्रमुख हैं। इसमें बनिया जाति ऊँची पिछड़ी जाति है। सोनार और सूरी की आर्थिक स्थिति मजबूत है। लेकिन ये जातियाँ जनसंख्यात्मक रूप से कमजोर है। वैश्य जाति/समुदाय में तेली की जनसंख्या सबसे अधिक है, लेकिन इनके पास आर्थिक संसाधनों की कमी है। सामान्यतः वैश्य जाति/समुदाय के अन्तर्गत आने वाली जातियाँ चुनावों में एकजुट होकर मतदान करती हैं। लेकिन इनमें प्रतिनिधित्व के स्तर पर बनिया जाति सबसे आगे रही है।

**निम्न पिछड़ी जातियाँ :–**

'निम्न पिछड़ी जातियाँ' शब्द–समूह का इस्तेमाल यादव कुर्मी–कोइरी और बनिया को छोड़कर दूसरी पिछड़ी जातियों के लिए किया गया है। ये जातियाँ जनसंख्यात्मक और आर्थिक रूप से कुछ मजबूत है, लेकिन इसकी आर्थिक स्थिति भी बहुत दयनीय है। इस कारण से यह राजनीतिक रूप से वैश्य जाति/समुदाय की प्रभावशाली बनिया जाति की पिछलग्गू बनी रही है। इसमें बढ़ई, धानुक, हजाम, कहार, कान्दू, लोहार जैसी जातियाँ शामिल है। ये जातियाँ जीवन के सभी क्षेत्रों में बहुत अधिक पिछड़ी है। इनके लिए कहीं–कहीं 'अति पिछड़ी जातियाँ' शब्द का इस्तेमाल भी किया गया है।

**अन्य पिछड़ी जातियाँ :–**

विकासशील समाज अध्ययन पीठ (सी.एस.डी.एस.) के आँकड़ों के संदर्भ में अन्य पिछड़ी जातियाँ शब्द–समूह का इस्तेमाल किया गया है। इसमें यादव और कुर्मी–कोइरी के अलावा बाकी सारी हिन्दू पिछड़ी जातियाँ शामिल है। किताब में प्रयुक्त निम्न पिछड़ी जातियाँ और अन्य पिछड़ी जातियाँ शब्द–समूह के बीच थोड़ा

अन्तर है। अन्य पिछड़ी जातियों में बनिया जाति भी शामिल है। बनिया जाति के अलावा सभी अन्य पिछड़ी जातियों के मत रूझान को मोटे तौर पर निम्न पिछड़ी जातियों का मत रूझान माना जा सकता है। निम्न पिछड़ी जातियाँ और अन्य पिछड़ी जातियाँ – इन दो अलग–अलग शब्द–समूहों के इस्तेमाल का बुनियादी कारण यह है कि विकासशील समाज अध्ययन पीठ ने अपने सर्वेक्षण में पिछड़ी जातियों को तीन भागों में बाँटा– यादव, कुर्मी–कोइरी और अन्य पिछड़ी जातियाँ (यद्यपि अक्टूबर–नवम्बर 2005 का सर्वेक्षण ज्यादा व्यापक था, लेकिन एकरूपता कायम रखने के लिए मैंने इन्हीं श्रेणियों का इस्तेमाल किया है।)

जहाँ तक पिछड़ी जातियों में गतिशीलता के प्रेरक तत्त्वों का प्रश्न है तो इस सम्बन्ध में सर्वप्रथम जिस महत्त्वपूर्ण तथ्य का उल्लेख किया जा सकता है वह है अंग्रेजों द्वारा लायी गयी नयी औद्योगिकी जिसने सम्पूर्ण उप महाद्वीप का प्रभावकारी प्रशासनिक एवं राजनीतिक एकीकरण सम्भव बनाया। यह प्रशासनिक और राजनैतिक एकीकरण देश भर में सड़कों के जाल, देशव्यापी आधुनिक अधिकारी तल निर्माण और एकरूप कानून व्यवस्था बनाने के लिए किये गये उपायों के बिना नहीं हो सकता था। इसके साथ ही साथ हर जरह स्थानीय युद्धों की समाप्ति, ठगों का अंत, दास प्रथा का नाश, भूमि के पट्टे सम्बंधी सुधारों का समावेश, चाय, कॉफी, कपास, तम्बाकू जैसी फसलों के लिए बागानों का प्रारम्भ और कस्बों तथा नगरों का विकास इन सबने अन्ततः आर्थिक विकास के लिये आधार तैयार किया। आधुनिक शिक्षा देने के लिए स्कूल–कॉलेजों और अदालतों की स्थापना का कार्य जो सिद्धान्तः जाति, धर्म के भेदभाव के बिना सबके लिये थे, पश्चिमी साहित्य राजनीतिक चिन्तन, इतिहास और कानून के अध्ययन ने भारतीय अभिजात वर्ग को कानून के समक्ष सब स्त्री पुरूषों की समानता और नागरिक अधिकार जैसे नये मूल्यों के लिये संवेदनशील बना दिया। यूरोपीय प्रचारकों द्वारा हिन्दू धर्म, अस्पृश्यता और जाति व्यवस्था की तीव्र आलोचना और उनके द्वारा चलाये गये स्कूल, अनाथालय और अस्पताल इन सबने पिछले 140 वर्षों में किये गये सामाजिक सुधारों और पश्चिमीकरण के लिये अनुकूल सैद्धान्तिक और नैतिक वातावरण तैयार किया।

जहाँ तक निम्न और पिछड़ी जातियों का प्रश्न है उनके लिये पश्चिमीकरण दुगुना वांछनीय हो गया क्योंकि उसमें ऐसी वस्तुएँ सम्मिलित थीं जो न केवल अपने आप में मूल्यवान थीं बल्कि जो उच्च जातियों के पास तो थीं लेकिन उनके पास न थी। ऊंची जातियों के बराबर पहुंचने के लिए केवल संस्कृतिकरण पर्याप्त न था। इस भांति पश्चिमी शिक्षा और उसी के द्वारा उपलब्ध फल को प्राप्त करने के लिये



उन्होंने और भी कमर कसी। शिक्षा और नये पेशों में उच्च जातियों की प्रधानता ने इस तरह पिछड़े वर्ग आन्दोलन के लिए मुख्य सेतु प्रस्तुत किया।

सामाजिक गतिशीलता की इच्छा जाति समूहों के माध्यम से मुखर हुई। क्षैतिज एकीकरण में वृद्धि के कारण जो संचार साधनों में सुधार के कारण हुई विस्तृत क्षेत्र में रहने वाली सम्बद्ध जातियां गतिशीलता की प्रक्रिया में खींच आयी। देश के विभिन्न भागों में जातीय संघ बनने लगे और सामाजिक तथा आर्थिक उन्नति को प्रत्येक संघ ने अपना लक्ष्य बनाया। बहुत से संघों ने जाति के कल्याण के लिये पत्रिकायें प्रकाशित कीं, अपनी–अपनी जाति के छात्रों के लिये छात्रावास बनवाने और उन्हें छात्रवृत्तियाँ प्रदान करने के लिये धन जमा किया और जाति के रीति–रिवाजों में सुधार के कार्यक्रम बनाये।

प्रारम्भ में इन सुधारों का उद्देश्य साधारणतः जीवनशैली और कर्मकाण्ड का संस्कृतिकरण और कभी–कभी विवाह और मृत्यु के अवसरों पर खर्च में कमी करना होता था। फलतः गतिशीलता सम्बंधी आकांक्षायें स्थानीय जातियों में पहले से मौजूद प्रतिबद्धता में जुड़ गयी। जहाँ एक जाति स्थानीय सोपान में अपने लिये ऊँची हैसियत के लिये संघर्ष करती थी वहीं वह दूसरों को विशेषकर अपने से नीची जातियों को ऊपर उठाने के प्रयासों पर आपत्ति करती थी।

नये अवसरों का लाभ उठाकर अपनी स्थिति में सुधार करने की प्रवृति जाति समूहों के स्वरूप को ही परिवर्तित कर दिया। पिछड़ी जातियों की इस गतिशीलता का एक अत्यन्त प्रबल साधन था– व्यवस्था की राजनीतिक अस्थिरता। स्थानीय राजसत्ता प्राप्त करने वाली कोई भी जाति क्षेत्रीय होने का दावा कर सकती थी।

पिछड़ी जातियों में गतिशीलता का व्यापक संकेत जनगणना के कार्यों से मिलने लगा था जो 1901 की जनगणना के समय बहुत व्यापक 1901 हो गया। धूरिये के शब्दों में– बहुत सी महत्वाकांक्षी जातियों ने अपना स्थान ऊँचा करने के मौके को फौरन भांप लिया। उन्होंने अपने सदस्यों से सम्मेलन किये और इसका प्रबंध करने के लिये पंचायतें बना लीं कि उनका स्थान उसी तरह लिखा जाय जो उनकी दृष्टि से उनके गौरव के अनुकूल हों। दूसरे कुछ लोग जिनका प्रगति के इन चोरी के रास्ते से रूष्ट होना स्वाभाविक था, उतनी ही तत्परता से उनके दावों का खण्डन करने लगे।

इस प्रकार परस्पर आरोप और प्रत्यारोप का आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। उच्चतम जातियों को छोड़ बाकी सब जातियों के नेता खुल्लम खुल्ला जनगणना

को अपने उन सामाजिक दावों पर आग्रह करने और शायद कुछ मान्यता प्राप्त कर लेने का अवसर मानते थे। जो अपने से ऊँची जाति के लोग उन्हें देते नहीं थे।

इस प्रकार जनगणना में उच्चतर जाति के रूप में घोषित किये जाने के दावे करने की प्रवृत्ति समय के साथ बढ़ती ही गयी और अधिकाधिक लोग जाति की गतिशीलता को एक नये व सरकारी माध्यम के बारे में सफल हो गये। लोगों में आम धारणा थी कि जनगणना का उद्देश्य यह दिखाना नहीं है कि हर जाति में कितने लोग हैं बल्कि विभिन्न जातियों की सापेक्षिक स्थिति निश्चित करना और सामाजिक श्रेष्ठता के प्रश्नों को तय करना है।

पिछड़ी जातियों में तीव्रतर चेतना और जाति सभाओं की स्थापना के परिणामस्वरूप जातियों के क्षैतिज प्रसार में वृद्धि हुई। क्षैतिज प्रसार का सबसे अच्छा उदाहरण अहिरों का है, जिन्होंने 1912 में ''गोप जातीय सभा'' स्थापित की जिसमें कुछ ही वर्षों में पंजाब से लेकर बंगाल तक समस्त उत्तर भारत की गोपालक जातियां सम्मिलित हो गयीं। सभा संयुक्त प्रान्त में मैनपुरी से ''अहीर समाचार'' नामक एक मासिक पत्रिका भी प्रकाशित करती थी। उसके वार्षिक सम्मेलन में उत्तर भारत विभिन्न गोपालक जातियों के बीच एक साथ खानपान का भी प्रबन्ध किया।

संक्षेप में, जनगणना को जातियों के पद को स्थिर के लिये प्रयोग के प्रयास का उल्टा असर हुआ जिससे गतिशीलता की प्रेरणा मिली और अन्तर्जातीय प्रतिबद्धता बढ़ गयी।

## संदर्भ सूची :


1. योगेश अटलः चेन्जिंग पैटर्नस ऑफ कास्टः नेशनल पं, दिल्ली, 1968, पृ.20
2. सिंह, पुष्पाः पिछड़ी जातियों में सामाजिक आर्थिक गतिशीलता, अप्रकाशित शोध, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी 1986
3. एम.एन. श्रीनिवासः कास्ट इन माडर्न इण्डिया, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई 1962
4. ओझा, सरोज कुमारः पिछड़ी जातियों की सामाजिक चेतना एवं राजनैतिक व्यवहार, अप्रकाशित शोध, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी 1992
5. गुप्ता, अन्जू दासः पिछड़ी जातियों में स्त्रियों की सामाजिक–आर्थिक दशायें, अप्रकाशित शोध, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी 1993





6. गुप्ता, अरूण प्रसाद : उच्च एवं पिछड़ी जातियों में संघर्ष, अप्रकाशित शोध, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, 1993
7. यादव, कल्पनाथ सिंह : पिछड़ी जातियों में नेतृत्व के उभरते प्रतिमान, अप्रकाशित शोध, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी 1993


****